

तागिन लोकोक्तियां : परिचय, स्वरूप एवं विशेषताएं

डॉ. तारो सिन्दिक

अरुणाचल प्रदेश एक जनजातीय प्रदेश है जहाँ पर छब्बीस विभिन्न जनजातियाँ वास करती हैं। अरुणाचल प्रदेश के निशी, गालो, आदी तथा आपातानी आदि की तरह ही तागिन जनजाति भी अपने आपको आबोतानी का वंशज मानती है। उनके अनुसार 'आबोतानी' और 'आनअ यापी' उनके पूर्वज हैं। आबोतानी और आनअ यापी की तुलना 'मनु-श्रद्धा' या 'आदम-इव' के साथ की जा सकती है। तागिन लोगों की मान्यता है कि मानव जाति की उत्पत्ति इन्हीं आदिम स्त्री-पुरुष से हुई है। तागिन जनजाति के नामकरण, उत्पत्ति के स्रोत तथा विस्थापन आदि के संबंध में कई धारणाएँ लोगों में आज तक बनी हुई हैं। लिखित दस्तावेज या प्रमाण के अभाव में तागिन जनजाति की ऐतिहासिक जानकारी प्राप्त करना लगभग नामुमकिन है। यह आश्चर्य की बात है कि तागिन लोगों को स्वयं नहीं मालूम कि 'तागिन' शब्द का अर्थ क्या है और कहाँ से आया ? इतना तो स्पष्ट है कि तागिन शब्द कहीं बाहर से ही आया हुआ है क्योंकि इस शब्द का उल्लेख तागिन लोक-कथाओं एवं गीतों में कहीं भी नहीं मिलता। यहाँ तक कि धर्म गुरुओं को भी इस शब्द के विषय में पता नहीं है। ध्यातव्य है कि अरुणाचल प्रदेश में केवल दो जनजातियों, मोम्पा और खामती- के पास ही अपनी लिपि हैं, जिनके कारण उनका इतिहास आज भी लिखित रूप में सुरक्षित है। लेकिन शेष जनजातियों की अपनी लिपि विकसित नहीं हो पाई है, जिसके कारण उसके संबंध में ठोस जानकारी अनुपलब्ध है। इसी कारण केवल जनश्रुतियों एवं किंवदंतियों के आधार पर ही इन जनजातियों का इतिहास मालूम किया जा सकता है, जिनमें से तागिन भी एक है।

लोक साहित्य के अध्ययन में लोक कथाओं तथा लोकगीतों की अपेक्षा लोकोक्तियों का भी महत्व कम नहीं है। लोकोक्तियाँ भी जीवन की वास्तविक घटनाओं से उतनी ही जुड़ी रहती हैं जितनी लोक कथाएँ एवं लोकगीत । समाज में किसी विशेष घटना या व्यक्ति-विशेष की महत्वपूर्ण उक्ति जन-सामान्य के बीच प्रचलित होकर लोकोक्तियों का रूप धारण कर लेती हैं और आम जनता के लिए नीति वचन की तरह काम करने लगती हैं। उपदेश और नीति का पुट लोक-कथाओं एवं गीतों में भी होता है, परंतु लोकोक्तियों और मुहावरों में यह जिस शैली में प्रस्तुत किया जाता है वह लोक-कथा एवं लोकगीतों से सर्वदा परे है। डॉ. सत्येन्द्र ने लोकोक्ति का स्वरूप निर्धारित करते हुए लिखा है कि "किन्तु ऐसा भी साहित्य है, जिसमें अभिव्यक्ति का इतना विस्तार नहीं, और जिसका अभिप्राय कथा अथवा गीत की तरह किसी बात के आनन्द के लिए कहने की प्रवृत्ति में कम मिलता है। किन्तु जिसमें बहुत संक्षेप में कुछ व्यवहार विषयक बातों को प्रकट करने की प्रवृत्ति विशेष होती है। जिसमें कथा तत्व बहुत लघु होता है अथवा नहीं भी होता है।"¹

उपरोक्त वाक्यों में सत्येन्द्र जी ने लोकोक्ति और लोक-कथाओं एवं लोक-गीतों में विद्यमान विभेद को स्पष्ट किया है। उनके अनुसार लोकोक्तियों एवं मुहावरों में मनोरंजन या आनंद तत्व का स्थान नहीं होता और न ही वह कथा एवं गीतों की तरह विस्तृत होते हैं। छोटे से वाक्यांश से किसी विस्तृत प्रसंग को अभिव्यक्त करना लोकोक्तियों एवं मुहावरों की सबसे बड़ी विशेषता है।

तागिन लोक-सुभाषित में लोकोक्तियों का प्रमुख स्थान है। यह दोनों अवयव तागिन जनजाति के बुजुर्ग वर्गों द्वारा अर्जित जीवनानुभवों का प्रतिफलन है। यह अनपढ़-गंवार और जंगली कहे जाने वाले लोगों की बौद्धिक क्षमता का प्रमाण है। जब भी घरों में या समाज में किसी भी प्रकार का आयोजन होता है तो बुजुर्ग वर्ग अपने वचनों में लोकोक्तियों या मुहावरों का प्रयोग किये बिना नहीं रहता। मजे की बात यह है कि ऐसे प्रयोग के लिए उन्हें प्रयास नहीं करना पड़ता। वह तो उनके हृदय-कोश से अनायास ही प्रस्फुटित होती हैं। अभिव्यक्ति शैली की विशिष्टता एवं अर्थ-व्यंजना की विलक्षणता की दृष्टि से तागिन लोकोक्तियाँ अधिक प्रखर एवं पैनी हैं। इन लोकोक्तियों को तागिन में 'कुर्युम जितिन' कहा जाता है। 'कुर्युम' का अर्थ है आदिम युग और 'जितिन' अर्थ होता है, उक्ति या वचन। अतः 'कुर्युम जितिन' का अर्थ हुआ आदिम युग में ज्ञानी लोगों के वाणी से निकले नीतिपरक एवं ज्ञानवर्द्धक वचन। तागिन लोकोक्तियों का एक संग्रह 'कुर्युम जितिन' के नाम से प्रकाशित हो चुका है जिनके सम्पादक गण हैं, आबे मारदअ, रोकपो दाबु लुई तामिन तथा ए.वी. कृष्णमूर्ति अय्यर। इस लघु-पुस्तक की भूमिका में तागिन लोकोक्तियों की प्रवृत्ति स्पष्ट करते हुए लिखा गया है, "अधिकतर लोकोक्तियाँ तागिन जनजाति की दैनन्दिनी से जुड़ी हुई हैं। नीति-सिद्धान्त, आचार-संहिता, अमीरी-गरीबी, भाग्य-शिकार, कृषि, विवाह, परिश्रम, चतुराई, सदभावना, उदारता, पालतू पशु आदि ऐसे विषय हैं जो रोजमर्रा की जिंदगी से संबद्ध हैं। ये लोकोक्तियाँ इन्हीं विषयों पर केन्द्रित हैं।" उन वचनों में निहित व्यंजनात्मक अर्थ पीढ़ी दर पीढ़ी तागिन जन-जीवन के मार्ग-दर्शक की भूमिका अदा करते आ रहे हैं। जीवन के वास्तविक तथ्यों से निर्मित इन लोकोक्तियों ने लोक-जीवन में इस तरह प्रसार पाया कि वह महज व्यक्ति-विशेष तक सीमित न होकर समष्टि की सम्पत्ति बन गई। वर्तमान युग में इन लोकोक्तियों का प्रयोग विभिन्न प्रकार के आयोजनों में किया जाता है। विशेषकर युवा वर्ग को जीवन संबंधी तात्विक ज्ञान प्रदान करने के लिए इन लोकोक्तियों का प्रयोग किया जाता है।

डॉ. कृष्णदेव उपाध्याय ने लोकोक्तियों की तीन विशेषताएँ निर्धारित की हैं, (क) समास शैली (ख) अनुभूति और निरीक्षण तथा (ग) सरलता। वहीं डॉ. श्रीराम शर्मा ने अपनी पुस्तक लोक साहित्य : सिद्धान्त और व्यवहार में डॉ. दक्षिणामूर्ति द्वारा विवेचित लोकोक्तियों की विशेषताओं का उल्लेख किया है जो इस प्रकार हैं- (क) लघुत्व (ख) लय या गीत (ग) तुक या अनुप्रास (घ) निरीक्षण और अनुभूति की अभिव्यंजना (ङ) प्रभावशाली और लोकरंजकता तथा (च) सरल शैली।³ इनमें से क, घ तथा च तो डॉ. कृष्णदेव उपाध्याय द्वारा निर्धारित विशेषताओं से भिन्न नहीं है। ख और ग लोकोक्तियों के कला पक्ष पर केंद्रित है इसलिए इसका विश्लेषण हम आगे करेंगे। इस प्रकरण में केवल लोकोक्तियों के भाव-पक्ष की ही विवेचना प्रस्तुत

की जा रही है। किसी भी प्रांत की लोकोक्तियों का उत्स या स्रोत आमतौर पर एक होने के कारण उनकी विशेषताएँ भी लगभग एक समान होती हैं। इसी कारण तागिन लोकोक्तियों में भी कृष्णदेव उपाध्याय तथा डॉ. दक्षिणामूर्ति द्वारा निर्धारित सारी विशेषताएँ विद्यमान हैं। अध्ययन की सुविधा की दृष्टि से हम तागिन लोकोक्तियों की विशेषताओं को निम्नलिखित शीर्षकों के अंतर्गत विभाजित कर उन पर विचार करेंगे।

(1) नीति और उपदेश :-

हिंदी साहित्य कोश के अनुसार, "लोकोक्तियाँ मानवी ज्ञान के घनीभूत रत्न हैं, जिनमें बुद्धि और अनुभव की किरणें फूटने वाली ज्योति प्राप्त होती हैं... लोकोक्ति साहित्य संसार के नीति साहित्य का प्रमुख अंग है।"⁴ प्रत्येक समाज में प्रचलित लोकोक्तियाँ अलिखित कानून के रूप में मानी गयी हैं। मनुष्य अपनी बात को और अधिक प्रभावपूर्ण बनाने के लिए इनका प्रयोग करता है। लोक में पीढ़ियों से प्रचलित इन उक्तियों में अनुभव का सार एवं व्यावहारिक नीति का निचोड़ होता है। तागिन में प्राप्त लोकोक्तियाँ भी नीति और उपदेश से परिपूर्ण हैं। इसका प्रयोग ही किसी को उपदेश देने हेतु किया जाता है। आगे हम कुछ लोकोक्तियों के माध्यम से इस तथ्य की पुष्टि करेंगे।

(क) लिन्दो नअइअ पोकमाप ला, गोयी नअइअ सिंडसू ला। अर्थात् जो अत्यधिक चंचल और असंतुलित होता है, जीवन के मार्ग में ठोकर खाता है और जो संयमित रहता है वह जीवन में अपार सफलता को प्राप्त करता है।

इस लोकोक्ति के माध्यम से युवा पीढ़ी को यही उपदेश दिया जाता है कि हमें किसी भी परिस्थिति में मन को संयमित रखना चाहिए। असंतुलित और चंचल मन हमारे पतन का कारण बनता है।

(ख) कोलुड बअ चेचुड माबअ का, ताड़ो बअ बारिड माबअ का।"

अर्थात् परिवार और समाज में रहकर कोलुड और ताड़ों जैसा किसी कोने में पड़े नहीं रहना है। यह एक सामाजिक लोकोक्ति है जिसमें यह उपदेश दिया जाता है कि समाज और परिवार में रहने के लिए हमें लोगों के साथ मिल जुलकर चलना होगा। मन में किसी भी प्रकार का छिपाव या दुराव नहीं रहना चाहिए। इस लोकोक्ति का प्रयोग विवाह और अन्य मसलों के निमित्त आयोजित सभा में भी किया जाता है जिसमें मध्यस्थ व्यक्ति द्वारा दोनों पक्षों को यह कहा जाता है कि जो भी बात रखें, उसे सम्पूर्णता में और खुले हृदय के साथ रखें, आधी-अधूरी नहीं। जो ऐसा नहीं करते उनकी तुलना कोलुड और ताड़ो नामक जंगली पेड़ों से की जाती है। ये दोनों जंगली पेड़ अन्य पेड़ों से अलग किसी कोने में ही उगते हैं इसलिए वे संकीर्णता और निकृष्टता का प्रतीक बनकर इस लोकोक्ति में आये हैं।

इस प्रकार से तागिन में प्राप्त सभी लोकोक्तियाँ किसी-न-किसी प्रकार के उपदेश देने हेतु निर्मित हैं, जिसका आधार-भूमि प्रकृति के तमाम उपादान हैं, जो जन-जीवन को सदियों से प्रभावित करते आये हैं।

(2) समास शैली :

लोकोक्तियों की सबसे पहली विशेषता है इनकी समास शैली। कृष्णदेव उपाध्याय के अनुसार, "लोकोक्तियाँ आकार में तो छोटी हैं परंतु इनमें विशाल भाव-राशि सिमटी पड़ी रहती है।"⁵ तागिन लोकोक्तियाँ भी समास शैली में रचित हैं। इनके रचयिताओं ने बड़े-बड़े प्रसंगों को एक छोटी सी उक्ति में व्यक्त करके अपनी अद्भुत विचार-शक्ति और सूझ-बूझ का परिचय दिया है। हिंदी साहित्य जगत में दोहा छंद में जो गुण है वही गुण तागिन लोकोक्तियों में भी पाया जाता है। बिहारी की भांति ही तागिन लोकोक्तियों में 'गागर में सागर' भरने की अपार क्षमता है। इनका उक्ति वैचित्र्य किसी अभिजात्य साहित्य से कम नहीं है। उदाहरण के लिए निम्नलिखित लोकोक्ति को ले सकते हैं- "बअनअ बजप नअ नम्बू जपतू ला दोतअ बजप नअ लम्दा लपलप ला।"

जिस गृहिणी की जुबान बेलगाम चलती रहती है, उससे घर की सुख, शांति और एकता समाप्त हो जाती है, जिस प्रकार से हल्की परंतु निरंतर बूँदा- बांदी से जमीन ज्यादा फिसलन भरी हो जाती है। यह लोकोक्ति आकार की दृष्टि से केवल दो पंक्तियों की है, परंतु इसमें जीवन से जुड़े एक व्यापक और व्यवहारिक पक्ष को उजागर किया गया है। अपनी जुबान पर काबू रखना महिलाओं के लिए मयार्दा का एक अंग है। जो महिलाएँ आवश्यकता से ज्यादा जबान चलाती हैं वे गृहस्थी की तबाही का कारण बनती हैं। उसकी तुलना बारिश की उन हल्की- धीमी बूँदों से की गयी है जिनके निरंतर बरसने से मिट्टी की चिकनाई बढ़ जाती है, जिसमें फिसलने की संभावना ज्यादा होती है। तागिन में ऐसी स्त्रियों को हेय दृष्टि से देखा जाता है, जो स्थान और समय के औचित्य का ध्यान रखे बिना कुछ भी बोलती रहती हैं। ऐसी स्त्रियाँ ही परिवार की अखंडता में दरार उत्पन्न करती हैं। अतः निरर्थक बातें करने वाली स्त्री एवं निरंतर बरसने वाली बूँदों में, इस प्रसंग में साम्य पाया जाता है। इतनी बड़ी बात इस छोटी सी लोकोक्ति में कही गयी है। ऐसा समास शैली के कारण ही हुआ है। एक और उदाहरण द्रष्टव्य है- "यापा दअगा नअ बअनअ रअमा ला इयेजर दअगा नअ लाकतअ रअमा ला।"

अर्थात् जो युवक अतिरिक्त खाना खाता है वह 'बअनअ' नहीं खरीद सकता उसी प्रकार जो युवती अतिरिक्त खाना खाती है, वह लाकतअ यानी स्थानीय आभूषण नहीं खरीद सकती।

इस छोटी-सी लोकोक्ति में भी एक व्यापक प्रसंग निहित है। तागिन समाज में 'बअनअ' यानी स्त्री को खरीदकर (ब्याहकर) ले जाना बहुत गौरव की बात होती है। उसी प्रकार जिन स्त्रियों के पास अधिक मात्रा में स्थानीय आभूषणों का जमावड़ा हो, उनकी भी मान-सम्मान अधिक होता है। यह दोनों कार्य इतने सरल नहीं होते हैं। दोनों के लिए आर्थिक समृद्धि एक अनिवार्य शर्त है और आर्थिक समृद्धि तभी संभव है जब अर्थ का व्यय उचित समय और सही अनुपात में हो। यहाँ अतिरिक्त खाना खाने से आशय है व्यर्थ ही धन का खर्च करना। जो व्यक्ति अर्थ का मूल्य नहीं जानता वह अर्थ का संचय नहीं कर सर्वोत्तम और जो

अर्थ का संचय नहीं कर सकता वह धनाभाव में न तो किसी लड़की से विवाह रचा सकता है और न ही स्त्री आभूषण खरीद सकती है। इसीलिए इस लोकोक्ति के माध्यम से युवा वर्ग को उचित मात्रा में अर्थ-व्यय का उपदेश दिया गया है।

(ग) अनुभूति और निरीक्षण :-

तागिन लोकोक्तियाँ शुद्ध जीवन-अनुभूतियों पर आधारित हैं। विधिवत शिक्षा व्यवस्था से कोसों दूर रहने वाले लोगों द्वारा निर्मित इन लोकोक्तियों में जो बौद्धिक एवं भावनात्मक अभिव्यक्ति हुई, इसकी आधार-भूमि जीवन की अनुभूतियाँ ही हैं। तागिन लोकोक्तियों में प्रकृति का पूरा वैभव विद्यमान है। डॉ. श्रीराम शर्मा के अनुसार, 'लोकोक्तियाँ अद्भुत ज्ञान की रत्नाकर हैं। इनका प्रयोग विश्व की सभी भाषाओं में होता है और जन-समुदाय के सामान्य ज्ञान और निरीक्षण को प्रकट करता है। ये मानव-प्रकृति और उसके व्यावहारिक ज्ञान का द्योतक हैं, जो उसे उत्तराधिकार में सदैव से प्राप्त होती चली आ रही हैं।'⁶ तागिन समुदाय के भी अधिकांश लोकोक्तियों में प्रकृति का कोई-न-कोई उदाहरण विद्यमान है। आदिम युग में मानव और प्रकृति का घनिष्ठ संबंध रहा है। जीविकोपार्जन के लिए वे प्रकृति पर ही आश्रित थे। प्रकृति के सान्निध्य में रहने वाले लोगों ने अनायास ही प्रकृति का सूक्ष्म निरीक्षण किया है। तागिन लोकोक्तियों में इसका स्पष्ट प्रभाव परिलक्षित होता है। प्रकृति के विभिन्न क्रिया-कलापों एवं उपादानों में जहाँ आदिम मानवों ने अपने जीवन की वास्तविक घटनाओं से साम्य पाया तो उन तथ्यों को व्यक्त करने के लिए प्रकृति के उन्हीं रूपों का सहारा लिया गया। उदाहरण के लिए निम्नलिखित लोकोक्ति विशेष उल्लेखनीय है, "मोदी चेचू लो दोमिक पापुम गू दोरिया माबअ का इसी चेचू लो सअपिक तापु गू दोरिया माबअ का।"

अर्थात् घाटियों के तंग इलाकों में एकत्रित बादलों की तरह मत बनना और न ही नदी किनारे अवरुद्ध पानी में तैरते फेन की तरह बनना।

इस लोकोक्ति का प्रयोग खासकर पंचायत तथा विवाह आदि सभाओं में किया जाता है। जब गाँव के दो गुटों में किसी मसले को लेकर वाद-विवाद होते हैं तो ऐसे मौकों पर इस लोकोक्ति का प्रयोग किया जाता है। बातचीत के आरंभ में ही इस लोकोक्ति के माध्यम से दोनों पक्ष एक-दूसरे से यह आग्रह करते हैं कि हम बिना किसी छिपाव या दुराव के अपनी-अपनी बातें रखेंगे। घाटी में एकत्रित बादलों की तरह और ठहरे हुए पानी के किनारे तैरते झाग की तरह हम भी मन के किसी भी कोने में कोई बात छिपाकर नहीं रखेंगे। अतः हम नितांत निश्छल मन के साथ स्पष्ट वक्ता बनकर इस मसले को सुलझाने की कोशिश करेंगे।

इस लोकोक्ति का निर्माण जीवन की यथार्थ अनुभूति एवं प्रकृति के सूक्ष्म निरीक्षण से हुआ है। अपनी जीविका के लिए पहाड़ों एवं नदियों में विचरण करते वक्त आदिम मानवों ने प्रकृति के इन उपादानों को

कई बार देखा। जैसे घाटी में बादलों का अधिक मंडराना एवं अवरुद्ध पानी के किनारे एकत्रित झागों का वे नित्य साक्षात् दर्शन करते थे। जीविकोपार्जन के लिए जंगल, पर्वत और नदियों में विचरण करना इन लोगों के दैनिक जीवन का अंग था। अतः किसी ज्ञानी व्यक्ति के मस्तिष्क में प्रकृति की इन नियमित घटनाओं ने विचार को आंदोलित किया और यह 'मोदी चेचू' के 'हापम' तथा इइसी 'चेचू' की 'सअपिक' संकीर्णता और निकृष्टता का प्रतीक बनकर उभरा। इसी कोटि की और लोकोक्ति निम्नलिखित है।

"इयेबु तअमुम आ इयोदि कालिम तअगाम

अ दअरी दूनअ

सअरा रिइका इा जिपि कालिन तअगाम

अ दअरी दूनअ।"

अर्थात् जिस प्रकार जीवित मछलियों को पानी से बाहर निकालना अत्यंत कठिन कार्य है उसी प्रकार किसी परायी स्त्री को अपनी दुल्हन बनाकर गृहस्वामिनी बनाना भी दुष्कर कार्य है। यह लोकोक्ति भी विशुद्ध जीवन-अनुभव तथा निरीक्षण से निर्मित है। जंगली पशुओं का शिकार करने के साथ-साथ मछलियाँ पकड़ना भी जनजातीय लोगों के दैनिक कार्यों में से एक है। पानी में तैरती मछलियाँ आसानी से पकड़ में नहीं आतीं। उसके लिए विभिन्न प्रकार के तरीकों एवं शारीरिक श्रम की आवश्यकता पड़ती है। वे इस अनुभव से रोज गुजरते हैं। इसी अनुभव से उत्पन्न हुई है यह लोकोक्ति। जितना श्रम मछली पकड़ने में इन लोगों को करना पड़ता था, विवाह रचाने में भी उतने ही श्रम की आवश्यकता होती है। पारंपरिक विवाह रचाना तो और भी कठिन कार्य है। विवाह का आयोजन करना, मिथुन एवं आतिरिक्त आभूषणों का बंदोबस्त करना, रिश्तेदारों को भोज में बुलाना, विवाह समारोह को संपन्न कराने वाले धर्मगुरु को उनकी बखशीश देना इत्यादि की व्यवस्था करना हर किसी के बस की बात नहीं। इसके लिए अतिरिक्त समय, ऊर्जा और धन की आवश्यकता होती है जो प्रत्येक व्यक्ति के लिए संभव नहीं। संभवतः इसीलिए आज की तारीख में पारंपरिक विवाह का प्रचलन बहुत कम हो गया है। यह केवल कुछ अमीर लोगों के शौर्य प्रदर्शन का माध्यम जैसा लगने लगा है। जिनके पास धन की कोई कमी नहीं है वही लोग अपने बच्चों का पारंपरिक विवाह करवा सकते हैं। साधारण लोगों के मन, इच्छा होने के बावजूद शादी में होने वाले खर्च का अनुमान लगाकर हतोत्साहित हो जाते हैं। तागिन लोक साहित्य में युवतियों की तुलना मछलियों से ही की गयी है। मछलियाँ और अविवाहित लड़कियाँ बिना किसी लोक-चिंता के अपने-अपने आंगन में स्वतंत्र होकर पलती-बढ़ती हैं। दोनों ही स्वभाव में बहुत चंचल होती हैं, इसलिए दोनों हासिल करना आसान काम नहीं है। एक के लिए कई प्रकार के सामाजिक और सांस्कृतिक रिवाजों तथा प्रक्रियाओं से गुजरना पड़ता है तो दूसरे के लिए शारीरिक बल के साथ-साथ भिन्न-भिन्न जाल बिछाने पड़ते हैं। अतः इस लोकोक्ति के निर्माण में भी बीज रूप मछली पकड़ने की अनुभूति है जो आदिम लोगों की दिनचर्या का एक अभिन्न हिस्सा है।

(घ) सरलता :- लोकोक्तियों की चौथी बड़ी विशेषता

है इनकी सरलता। डॉ. कृष्णदेव उपाध्याय के अनुसार, "ये लोकोक्तियाँ बड़ी सरल भाषा में निबद्ध हैं जिसे सुनते ही इनका अर्थ हृदयंगम हो जाता है। इनकी यही सरलता इनसे अतिशय प्रभाव उत्पन्न करने का कारण है।" तागिन की लोकोक्तियों की शब्दावली अत्यंत सरल होती है। जीवन की वास्तविक घटनाओं से संबंध्य होने के कारण इन लोकोक्तियों में शब्दाडंबर के लिए कहीं भी स्थान नहीं होता। तागिन लोकोक्तियों में उन्हीं शब्दों का प्रयोग किया जाता है जो तागिन लोक-जीवन में सामान्यतः व्यवहृत होते हैं। इसीलिए इन लोकोक्तियों को सुनते ही अर्थ की प्रतीति में कोई कठिनाई नहीं होती। इसी सरलता के कारण श्रोता के मर्म तक अपनी गहरी छाप छोड़ जाने में तागिन लोकोक्तियाँ अत्यंत सक्षम हैं।

तागिन लोकोक्तियों में पशु-पक्षियों, पेड़-पौधों, पहाड़ एवं नदियों का भरपूर प्रयोग हुआ है। प्रकृति के उपादानों के बिना शायद ही कोई लोकोक्ति बन पाये। ये वही प्राकृतिक संपदा है जिसके साथ आये दिन तागिन लोगों का साक्षात्कार होता रहता है। प्रकृति के अत्यधिक निकट होने के कारण ही वे उन शब्दावलियों से चिर-परिचित होते हैं जो लोकोक्तियों में प्रयुक्त होती हैं। उदाहरण के लिए निम्नलिखित लोकोक्ति को हम देख सकते हैं।

"दोतअ कामा बअ कारबो बोकला मा

सअची कामा बअ नसिन बोकला मा।"

अर्थात् आसमान के बिना तारे नहीं निकल सकते, धरा के बिना पेड़-पौधे नहीं उग सकते। जिस प्रकार तारागण और पेड़-पौधों का अस्तित्व आसमान और धरती पर आश्रित है उसी प्रकार माता-पिता पर ही उनके बच्चे आश्रित रहते हैं। अतः माता-पिता के बिना बच्चों का जीवन अधूरा है। इस लोकोक्ति में जिन शब्दों का प्रयोग हुआ है, उसे बच्चा-बच्चा भी बड़ी आसानी से समझ सकता है। इसमें शब्दाडंबर नगण्य है। दोतअ (अम्बर), कारबो (तारागण), सअची (धरती) तथा नसिन (वनस्पतियाँ) आदि ऐसे शब्द हैं जिसकी व्याख्या करने की कोई आवश्यकता नहीं, क्योंकि इन शब्दों से तागिन समाज का कोई भी व्यक्ति अनभिज्ञ नहीं है।

लोकोक्तियों में सरलता का होना कोई आकस्मिक घटना नहीं है। अनपढ़-गँवार और आदिम मानवों द्वारा निर्मित होने के कारण वे बाड़ और आंतरिक जगत की सहज-स्वाभाविक अभिव्यक्ति होती हैं। डॉ. श्रीराम शर्मा के अनुसार, "उसके प्रतिदिन के अनुभवों की सरस और सारपूर्ण अभिव्यक्ति

ही लोकोक्ति है।" इन लोकोक्तियों की निर्माण-प्रक्रिया में बलात प्रयास के लिए कहीं अवकाश नहीं, क्योंकि इतना तो हम कह सकते हैं कि आदिम लोगों ने लोकोक्तियों को गढ़ने की कोशिश नहीं की होगी। उन्होंने जीवन की किन्हीं परिस्थितियों में जिन लोकोक्तियों का निर्माण किया है वे अनायास ही उनके हृदय से अवतरित होकर कंठ से फूटी होंगी। जीवन-सत्य की सहज अभिव्यक्ति के लिए जिन शब्दों का प्रयोग इन लोकोक्तियों में हुआ है वह भी सहज-स्वाभाविक के साथ-साथ सरल हो गया है। हिंदी साहित्य में महात्मा कबीर ऐसे रचनाकार शीर्ष स्तंभ हैं। उन्होंने अपनी रचनाओं में कभी शब्दों को गढ़ने की बलात कोशिश नहीं की। अपनी अनुभूतियों की सहज अभिव्यक्ति के लिए उन्होंने जनमानस में प्रयुक्त शब्दों को ही चुना। इसी कारण उनके वचन जीवन के अत्यधिक निकद हैं। उसी प्रकार तागिन लोकोक्तियों के निर्माताओं ने भी लोक-जीवन में प्रयुक्त शब्दावलिओं को अपनी अभिव्यक्ति का माध्यम बनाया है। जन-जीवन के करीब होने से इन लोकोक्तियों को समझने में सरलता का अनुभव होता है, क्लिष्टता का नहीं। प्रमाण के लिए एक और उदाहरण नीचे दिया जा रहा है- "आनअ कामा बअ आला पतक अ रकिक रक्योक ला"

अर्थात् बिना ठोस वस्तु के जल से आधा भरा पतक (बाँस का बना गगरी नूमा पानी भरने का औजार) ज्यादा आवाज करता है। यह लोकोक्ति उन लोगों को लक्ष्य करके निर्मित हुई है जिनकी वाणी तो बहुत चलती है परंतु उनके मस्तिष्क में ज्ञान शून्य के बराबर है। यह लोकोक्ति हिंदी लोकोक्ति 'अधजल गगरी छलकत जाए' का पर्याय जैसा है। जिस प्रसंग के आधार पर ये दोनों लोकोक्तियाँ निर्मित हुई हैं, वह प्रसंग भी एक ही है। इस हिंदी लोकोक्ति के जन्म के संबंध में डॉ. कन्हैयालाल सहगल ने सारगर्भित तर्क दिया है जिसका उल्लेख डॉ. श्रीराम शर्मा ने किया है, यथा, "जो घड़ा पूरा भरा नहीं होता, वह कुछ छलकता है और उसके छलकने से कुछ आवाज होती है। इसके विरुद्ध जो पूरा भरा होता है, वह न छलकता है और न उसमें से कोई आवाज होती है। पानी का घड़ा लेकर आती हुई स्त्रियों के संबंध में यह हमारा प्रतिदिन का अनुभव है, किंतु यह तो मात्र नेत्रानुभव है। न जाने कितने लोग इस दृश्य को देखते हैं किंतु किसी प्रकार की मानसिक प्रतिक्रिया उनमें नहीं होती, किंतु किसी दिन किसी विचारशील व्यक्ति के मन में यह दृश्य उस व्यक्ति का चित्र खड़ा कर देता है जो बोलता बहुत है किंतु जिसका ज्ञान अधकचरा है, जिसकी विद्या अधूरी है। ऐसी स्थिति में नेत्रानुभव मन के अनुभव के रूप में परिणत हो जाता है और उसके मुख से सहसा निकल पड़ता है, "अधजल गगरी छलकत जाय।"⁸ प्रसंग के समान तागिन समाज में भी घरेलू कामकाज स्त्रियों की जिम्मेदारी होती है और उन जिम्मेदारियों में से एक है 'पतक' में पानी भरकर लाना। पतक में पानी भरकर लाना गाँवों के दिन-प्रतिदिन का अनुभव है। असंख्य लोग इसको देखते हैं किंतु किसी के मन में कोई प्रतिक्रिया नहीं जयती है। लेकिन एक अनुभवशील व्यक्ति ने व्यर्थ की बात करने वाले किसी व्यक्ति पर व्यंग्य करते हुए कहा होगा, आनअ कामा बअ आला पतक अ रकिक रक्योक ला।'

अतः हम कह सकते हैं कि तागिन जनजाति में प्रचलित यह लोकोक्तियाँ निस्संदेह एक अमूल्य धरोहर हैं जिसका संरक्षण एवं संवर्द्धन अत्यंत आवश्यक हो गया है। ये लोकोक्तियाँ बिहारी के दोहे के समान हैं जो

'देखन में छोटे लगे घाव करें गम्भीर'। इन्हीं लोकोक्तियों ने पूर्व के कितनी पीढ़ियों को ज्ञान और विवेक का पाठ पढ़ाया है। 'मसि कागद छुओ नहीं कलम गहि नहिं हाथ' वाले हमारे पूर्वजों को जब पोथी-ज्ञान से कोई सरोकार नहीं था, इन्हीं लोक सुभाषितों ने उनके ज्ञान चक्षुओं को खोले रखा और हर आगामी पीढ़ी का मार्ग भी प्रशस्त किया। दैनिक जीवन के अनुभवों से उपजी यह लोकोक्तियाँ न जाने कितनी सदियों से, परंपरागत रूप से प्रवाहमान हैं, जो आज भी अपने ठेठ रूप में जन-जन की वाणियों में व्याप्त हैं। लेकिन हम इस तथ्य को भी नहीं झुठला सकते कि आधुनिकता के रंग में रंगकर 'लोक' के सभी रंग शनैः शनैः धूसित होते जा रहे हैं। अतएव लोकोक्तियों का प्रचलन भी धीरे-धीरे विलुप्त होता जा रहा है। मेरे और आगामी पीढ़ी के लोगों को हिंदी और अंग्रेजी बोलने से फुर्सत नहीं तो ऐसे 'क्लासिक भाषा' के लिए अवकाश ही कहां ? आधुनिकीकरण के मोह-पाश में उलझे आज की पीढ़ी ऐसी मौखिक परंपरा से वंचित होता जा रहा है। अतः विलुप्त हो रही इस धरोहर को लिखित या अन्य किसी भी रूप में संरक्षित रखना अत्यंत आवश्यक हो गया है।

संदर्भ

1. डॉ. सत्येन्द्र, लोक साहित्य विज्ञान, पृ. 368
2. Mr. Abe Marde, Er. Rokbo, Dabu Lew. Tamin, Mr. A.V. Krishnamurthyiyer. Kuryum Nyitin P. 17
3. धीरेन्द्र वर्मा, हिंदी साहित्य कोश, पारिभाषिक शब्दावली (भाग-1), पृ. 498
4. डॉ. कृष्णदेव उपाध्याय, लोक साहित्य की भूमिका, पृ. 152
5. डॉ. श्रीराम शर्मा, लोक साहित्य : सिद्धांत और प्रयोग, पृ. 152
6. डॉ. श्रीराम शर्मा, लोक साहित्य : सिद्धांत और प्रयोग, पृ. 157
7. डॉ. श्रीराम शर्मा, लोक साहित्य : सिद्धांत और प्रयोग, पृ. 152
8. डॉ. श्रीराम शर्मा, लोक साहित्य सिद्धांत और प्रयोग, पृ. 153

संपर्क : सहायक प्राध्यापक

दोमी-पोलो, शासकीय महाविद्यालय, कामकी वैस्ट

सियाड, जि. : ओलो, अरुणाचल प्रदेश